दिशा प्रकाशन
१३८/१६, त्रिनगर, दिल्ली-११० ०३५

मेरी कहानियाँ

मुद्राराक्षस

मूल्य : बाईस रुपये
सर्वाधिकार : मुद्राराक्षस
प्रथम संस्करण : 1983
प्रकाशक : दिशा प्रकाशन, 138/16, त्रिनगर, दिल्ली-35
आवरण : पाली
रेखाचित्र : रणवीरसिंह बिष्ट
मुद्रक : रुचिका प्रिण्टर्स, दिल्ली-110032

MEREE KAHANIYAN (Hindi Short Stories)
by Mudrarakshas
Rs. 22.00

डॉ० धर्मवीर भारती को

विस्थापित

उसने नीचे झुककर अपनी पोशाक पर नजर डाली और थूका। सन्तुष्ट होने पर वह थूकता था। पोशाक कोई खास नहीं थी। दरअसल उसने थोड़ी देर पहले अपनी बदरंग पतलून के घुटने पर एक थिगली लगायी थी। उठने के बाद वह इस बात का इतमीनान कर लेना चाहता था कि वह थिगली जहां-की-तहाँ जमी हुई है। थिगली वहीं थी। ऊँचू ताँगेवाले ने उसे बताया था कि ट्रेन आ गयी है। उसने अविश्वास जाहिर किया। ट्रेन का वक्त उसे मालूम था। सभी ट्रेनों का वक्त उसे मालूम था। ताँगा आगे बढ़ाते हुए ऊँचू ने ललकार कर दुबारा कहा—सच कौवे, एक ट्रेन आयी है।

कौवा हर ट्रेन के आने और छूटने की खबर रखता था। सिर्फ पाँच ट्रेनें आती थीं। उनमें से एक आधी रात की ट्रेन की चिन्ता वह नहीं करता था। बहुत सुबह से लेकर शाम तक की ट्रेनों से उसका गहरा रिश्ता हो गया था। ट्रेन कहाँ से आती है और कहाँ जाती है, इसके बारे में जानने की जरूरत उसने महसूस नहीं की। वैसे उसे नफरत सिर्फ सुबहवाली ट्रेन से होती थी, जो रुकती ज्यादा थी और स्टेशन से रवाना होती थी, तो बेतरह बदबूदार गन्दगी छोड़ जाती थी।

ट्रेन सचमुच ही आ गयी थी। स्टेशन पर काफी भाग-दौड़ थी। लेकिन यह ट्रेन जाने क्यों उसे पहली नजर में ही सुबहवाली ट्रेन से भी ज्यादा घटिया लगी। लपककर प्लेटफार्म पर आ गया। वह अजीब बेहूदा ट्रेन थी! अन्दर बेहद भीड़ थी। पहली नजर में ऐसा लग रहा था, जैसे किसी जानवर की लाश में कीड़े पड़ गये हों। ट्रेन के बाहर खाकी वरदी वाले लोग बड़ी तादाद में बेहद चुस्ती के साथ दौड़-धूप रहे थे। इन लोगों को वह आसानी से पहचान गया और उसने मन-ही-मन निश्चय किया कि उनसे वह एक सुरक्षित दूरी बनाये रखेगा।

हालाँकि उस स्टेशन पर ज्यादा लोग वैसे भी नहीं उतरते थे, मगर कौवे को यह देखकर काफी ताज्जुब हुआ कि इस ट्रेन में जितने थे, सब आगे जानेवाले ही थे। उसका हाथ प्लेटफार्म पर आते हुए बिल्कुल तैयार हो चुका था, लेकिन उसने थोड़ी देर के लिए उसे दुबारा जेब में घुसा लिया। आम तौर पर वह चोरी या जेबकतरी नहीं करता था, माँग लेता था। खाने-पीने की चीजें उचक लेता था। इससे ज्यादा में उसकी रुचि नहीं थी।

वैसे तो कोई बात नहीं थी, अकसर ऐसा हो जाता था कि ट्रेन के आने पर उसे कुछ हासिल न हो, लेकिन इस ट्रेन को एक बार देखकर ही उसे चिढ़ महसूस होने लगी थी। एक तो खाकी वरदीवाले ये लोग कुछ दूसरे किस्म के थे, यानी चौराहे के आसपास गश्त लगानेवाले सिपाही से अलग। उस गश्तवाले सिपाही से तो कभी बातचीत भी की जा सकती थी, पर इन्हें देख कर ऐसा लग रहा था, जैसे ये आदमी न होकर ऐसे खाकी थैले हों, जिनके अन्दर मशीनें फिट कर दी गयी हों। इसके अलावा यात्री बिल्कुल घटिया लग रहे थे। उनके चेहरों से लग रहा था कि न उन्हें कहीं से आने का एहसास है, न कहीं पहुँचने की खवाहिश।

एक तो ट्रेन का बेवक्त आना और दूसरे यह माहौल, कौवे का मन खट्टा हो गया। उसने झुककर पतलून की थिगली को देखा और थूका। अभी उसने अपने आपको सीधा किया ही था कि एक अजीब भय उसके कन्धों को हिला गया। किसी ने पीछे से कालर के पास से उसकी कमीज खींची और ऊँची आवाज में कहा—एई!

कौवे ने घूमकर देखा। उन्हीं खाकी वरदीवालों में से कोई एक था। वह डर गया। तभी एक और खाकी वरदी वाला आदमी उधर दौड़ता हुआ आया—सर, ये आदमी···

—ये ट्रेन से बाहर कैसे आ गया? अन्दर करो! कमीज से पकड़नेवाले ने उसे दूसरे की ओर जोर से धकेल दिया।

—लेकिन मैं···जनाब···! कौवे ने कुछ कहना चाहा।

—हएष ! दूसरा दहाड़ा और उसे लगभग घसीटता हुआ ट्रेन की ओर ले चला। ट्रेन के पास वैसे ही दो और आदमी थे। उन्होंने उसे किसी सूअर की तरह दोनों बाँहों से लटकाया और ट्रेन के डब्बे के अन्दर झोंक दिया। डब्बे के अन्दर पहुँच कर वह बड़ी फुरती के साथ उठ खड़ा हुआ। दो क्षण अपने को सँभालने के बाद उसने निश्चय किया कि वह प्रतिवाद जरूर करेगा, लेकिन ठीक उसी क्षण उसकी पिंडली के पास किसी ने इतने जोर से चिकोटी काटी कि वह लगभग उछल पड़ा। उसकी टाँगों के ठीक नीचे लगभग दस बरस का एक मैला-सा लड़का बैठा हुआ अपने पैर का पंजा सहला रहा था। कौवे का मोटा-सा जूता शायद उसके पंजे पर पड़ गया था। लड़के का चेहरा एकदम काला था और उसपर मैल की परत चढ़ी हुई थी। पंजा सहलाते हुए वह कौवे को अपनी सफेद पुतलियाँ फाड़-फाड़कर घूरे जा रहा था।

—तूने मुझे चिकोटी काटी ? कौवे ने खीजकर कहा। लड़के ने जवाब नहीं दिया, बल्कि इस बार अपने छिपकली जैसे पंजे बढ़ाकर उसने कौवे की पतलून पकड़ी और पहले से भी ज्यादा जोर से दाँतों से काट खाया। कौवा तिलमिलाकर गालियाँ बकने लगा। लड़का फिर अपना पंजा सहलाने में व्यस्त हो गया। गालियाँ दे चुकने के बाद उसने ट्रेन के उस डब्बे में निगाह डाली। उसे अजीब लगा कि उस समूचे डब्बे में लोग इस तरह असंपृक्त बैठे हुए थे, जैसे कौवे का वहाँ वजूद ही न हो।

—ये किसका छोकरा है ? कौवे ने चिड़चिड़ाहट के साथ पूछा। जवाब तो दूर, लोगों ने शायद उसकी आवाज भी नहीं सुनी।

डब्बे के उस मनहूस वातावरण से वह बड़ी जल्दी परिचित हो गया। उत्सुकतावश उसने बारीकी से लोगों के चेहरे देखना शुरू किया। उसे लगा, जैसे उन चेहरों पर से खाल उतार ली गयी है। वह कुछ समझ नहीं पाया। डब्बे से बाहर जाया जा सकता है, या नहीं, इसका अन्दाजा करने में उसे जो समय लगा, उस बीच एक और घटना हो गयी। डब्बे के अन्दर तेजी के साथ एक के बाद एक कई आदमी चढ़े, जिनके हाथों में भारी-भारी टोकरियाँ थीं। इन टोकरियों में खाने-पीने की कई चीजें थीं। आखिरी आदमी

की टोकरी भारी थी। कौवे को उसने डपटा—वहाँ क्या खड़े हो, पकड़ो इसे !

कौवे को इससे ज्यादा और किसी चीज की जरूरत भी नहीं थी। उसने टोकरी को लपककर थाम लिया। उसमें काफी गर्म डबलरोटियाँ थीं। एक डबलरोटी उसने उड़ा दी। लेकिन उसे यह देखकर ताज्जुब हुआ कि वह सामान डब्बे में बैठे लोगों में बाँटा जाने लगा।

डब्बे के अन्दर नाहक धकेले जाने का गुस्सा वह भूल गया। वैसे उसने यह कोशिश की कि चाय वह दुबारा ले ले, लेकिन चाय देनेवाले ने उसे पहचान लिया। कौवा निराश नहीं हुआ। डबलरोटियाँ बाँटने में उसने खुद मदद शुरू कर दी। इस काम में उसे तीन हिस्से और फालतू मिल गये। वह चाहता था कि बच्चों के लिए बँटनेवाले बिस्कुट भी उड़ा दे, लेकिन उनमें उसका बस नहीं चला। जिस छोकरे ने उसे दाँत से काटा था, वह बिस्कुटों का छोटा-सा पैकेट ऊपर लगी झिल्ली के साथ ही खाने लगा। कौवा उसे गौर से घूर रहा था। छोकरा खुद भी सफेद पुतलियाँ फैलाकर उसे देख रहा था। कौवे ने हाथ बढ़ाकर छोकरे को बताना चाहा कि वह बिस्कुट झिल्ली सहित न खाये। लड़के ने अचानक एक चीख मारी और सीट के नीचे की ओर किसी चिड़चिड़े जानवर की तरह सरक गया।

कौवे ने उधर से ध्यान हटा लिया। वह चुरायी हुई डबलरोटी वहाँ नहीं खाना चाहता था। दरवाजे तक आकर उसने बाहर नजर डाली। खाकी वरदीवाले लोग वहाँ से थोड़ी दूर पर थे। वह उनके सामने प्लेटफार्म पर नहीं उतरना चाहता था। अजीब बेसुरी-सी सीटी बजाता वह नीचे उतरा। वरदीधारी आदमी उसे नीचे देखते ही चिल्लाया। इस बार कौवे ने उसे धक्का देने का मौका नहीं दिया, खुद ही लपककर डब्बे में आ गया। उसके पीछे-पीछे उन्हीं खाकी वरदीवालों में से एक अन्दर आया, चुपचाप डब्बे में नजर डाली और दरवाजे को घेरकर खड़ा हो गया। बाहर जाने का रास्ता इस तरह घिरा देखकर वह कुढ़ गया। थोड़ा सोचकर उसने साहस समेटा और निश्चय किया कि कुछ भी हो, वह इस मामले पर बात करेगा। खाकी वरदीवाले की ओर वह सरका ही था कि उसकी निगाह देखकर ठिठक गया। फिर थोड़ा-सा मुसकराया। उसे कुछ ऐसा लगा, जैसे

मुसकराहट काफी नहीं थी, इसलिए वह थोड़ा-सा हँसा भी। हँसने के बाद उसने कहा—जनाब, नमस्कार !

—क्या है जी ? वरदीवाले ने चिढ़कर पूछा।

इसके उत्तर में वह क्या बोले, यह सोच नहीं पाया। थोड़ा गम्भीर होते हुए उसने कहा—बात यह है कि मेरा मतलब है, इस डब्बे में काफी भीड़ है और मेरा मतलब है, ट्रेन तो अब चल भी देगी···

—तो फिर ? वरदीवाला दुबारा गुर्राया।

—ओह ! नहीं, वो मेरा मतलब है···

—तुम सीधे से बैठते क्यों नहीं हो जी ? वरदीवाले ने इस बार बेहद खीज के साथ कहा। कौवा खामोश होकर दो कदम पीछे खिसका। फिर उसे ध्यान आया कि ठीक उसके पीछे वही पाजी छोकरा बैठा है। कौवे के उधर देखते ही छोकरे ने छिपकली जैसे दोनों पंजे आगे बढ़ा जबड़ा फैलाया। कौवे ने सहमकर टाँग पीछे खींच ली।

उसके सामनेवाली सीट के आखिरी सिरे पर थोड़ी-सी हलचल हुई। एक बहुत दुबली-सी लड़की जैसे चौंकी। चौंककर उसने अपनी सिमटी हुई बाँहों और घुटनों की गठरी थोड़ी-सी ढीली की। गठरी के अन्दर एक नन्हा-सा बच्चा था। लड़की के पास बैठा हुआ बूढ़ा उसकी ओर झुककर देखने लगा। लड़की थोड़ी देर बच्चे को देखती रही, फिर उस पर लिपटा हुआ मैला कपड़ा खोलने लगी।

—क्या कर रही हो ? पास बैठे आदमी ने उसे टोका। लड़की बिना कोई उत्तर दिये कपड़े की परतें खोलती रही। आदमी ने फिर कहा—क्या कर रही हो ? उसे तकलीफ होगी !

लड़की इस बार रुक गयी। वैसे बच्चा परतों में से लगभग बाहर आ चुका था। उसका रंग काला नहीं था, लेकिन कमर से नीचे के हिस्से पर मोटे काले चमड़े के सैकड़ों पैबन्द की तरह काली चिपचिपी पपड़ियाँ जमी थीं। वह शायद रक्त था। उस पार लिपटे हुए कपड़े पर भी चौड़े-चौड़े दाग थे। लड़की उसे गौर से देखती रही, फिर होंठों-ही-होंठों में बुदबुदायी —वहाँ ठीक था···!

—मगर···! कहते-कहते आदमी रुक गया, जैसे उसके अन्दर कुछ

उछलने लगा।

कौवा ठीक से कुछ समझा नहीं। हाँ, उसे इतना जरूर लगा कि बच्चे को शायद कुछ चोट लगी है। लड़की के सामने बैठा एक आदमी उस बच्चे की ओर झुका, फिर लड़की के पास बैठे बूढ़े आदमी से बोला—इसकी पट्टी नहीं करायी तुमने ?

—पट्टी ? लड़की के करीब बैठे बूढ़े की उलझन शायद थोड़ी और बढ़ गयी—वो रो पड़ा था न···और फिर बात यह है···

—हाँ, यह बात तो है ! सामनेवाला आदमी एक क्षण के लिए चुप हुआ, फिर कौवे को अपनी ओर मुखातिब देखकर वह बोला—देखिए न साहब, मैं आपसे ही कह रहा हूँ···मैं आपको बताऊँ, वैसे मैं उन्हें मार देता। वे लोग तोपें लेकर आ गये थे न ! इतनी बड़ी तोप मैंने पहली बार देखी थी। और जनाब, तोप की आवाज आप जानते हैं, कैसी थी ? अब मैं आपको क्या बताऊँ, समझ लीजिए, जैसे चावल की देगची कोई आपके कान में घुसेड़ दे !

वह कहते-कहते उत्साह में आ गया था। कौवे को भी यह अच्छा लगा। तोप का जिक्र उसे रोचक लगा। कमिश्नर साहब की कोठी के सामने उसने एक भद्दी-सी तोप रखी हुई देखी थी। वह अलाउद्दीन खिलजी की तोप थी, किसी से उसने सुना था। मगर उस तोप को उसने चलते हुए कभी नहीं देखा था। कैसी आवाज होती होगी ? उसने उबलते चावल की देगची कान में घुस जाने की कल्पना की। तभी उसे उस बच्चे की याद आ गयी, जिसने उसकी पिंडली में काटा था। उसने घूमकर देखा, अजीब बात थी कि वह बच्चा भी अभी तक उसे ठीक उसी तरह सफेद आँखें फैलाये घूरे जा रहा था। कौवे को अपनी ओर घूमा देखकर उसके जबड़े ने दुबारा एक हल्की-सी जुम्बिश ली। कौवा डरा, लेकिन चिढ़ भी गया—अरे, ये बच्चा है, या क्या है !

बात करनेवाले आदमी को व्यतिक्रम से थोड़ी असुविधा हुई, फिर भी उसने कहा—ओह ! वो, पता नहीं कहाँ से आ गया ! हर किसी को काटने लगता है ! मेरा खयाल है, इसका परिवार वहीं समाप्त हो गया !

—वहीं ? वहीं कहाँ ? कौवे ने ताज्जुब से पूछा।

—अरे, वही तो मैं बता रहा था। उन लोगों ने तोप चला दी थी न ! पूरी मिलिटरी थी। तोप इतनी बड़ी थी कि उसकी सूँड में···

इसी वक्त उसके साथ बैठी युवती अचानक चीख पड़ी। उस आदमी को यह अच्छा नहीं लगा। युवती ने गोद के बच्चे को सामने फैला दिया। उस आदमी ने बच्चे को दुबारा उसकी ओर हटाते हुए कहा—ठीक तो है ! कहा न कि अभी उसे ढके रहो, कैंप पहुँचकर पट्टी करा लेंगे। अब आप ही कहिए न, बच्चे को गोली लगी है, भाग-दौड़ मची थी, भला ऐसे में मलहम-पट्टी कहीं ठीक तरह से हो भी सकती थी ? एक बात और भी है। अब अगर कोई फोटो खींचनेवाला ही आ जाये, तो वह ठीक से फोटो ले लेगा न ! पट्टी बँधी हो, तो क्या पता, खरोंच लगी है या गोली ! वहाँ जब बार्डर के पास थे, तब हम लोगों को थोड़ी देर हो गयी थी। वहाँ तो एक फिल्म भी खींच रहा था। कपड़े तो हम भागते वक्त घर पर ही छोड़ आये थे, रास्ते में उन्होंने बरतन भी छीन लिये थे !

कौवे ने सुना था कि सीमा के उस पार कहीं भारी गड़बड़ हुई है। उसने पूछा—आप लोग शरणार्थी हैं ?

—हाँ, और क्या ? हमें कम्बल भी मिलनेवाले थे, पर अब सुना है कि कैम्प पहुँचकर मिलेंगे। एक बरतन और एक कम्बल देंगे।

—सब लोगों को देंगे कम्बल ? कौवे ने ताज्जुब से पूछा।

—फिर क्या ! सभी लोगों को देंगे। चावल और मछली भी शायद मिले। थोड़ा-सा सरसों का तेल भी दे देते, तो अच्छा था। आप क्या यहाँ स्टेशन पर काम करते हैं ?

—मैं ? नहीं, मैं···मैं भी शरणार्थी हूँ !

बाहर कुछ अजीब किस्म की हलचल मच गयी। काफी तेजी से भाग-दौड़ हो रही थी। दूर कुछ पुलिस की सीटियाँ जैसी भी बज रही थीं। कौवे को इस बार ज्यादा चिन्ता नहीं हुई क्योंकि स्थिति समझने के बाद वह इस बात से खुश ही हुआ कि उसे अचानक जबरदस्ती ट्रेन के अन्दर धकेल दिया गया था। वह कम्बल के बारे में सोच रहा था। दिन उसका काफी अच्छा कट जाता था, लेकिन रात को सरदियों में खासी तकलीफ होती थी।

बूढ़े ने अपनी बात का सिलसिला दुबारा शुरू ही किया था कि डब्बे के दरवाजे के अन्दर एक-पर-एक कई आदमी घुस आये। उनके साथ दो वरदी वाले अफसर भी थे। वे लोग काफी साफ-सुथरे कपड़े पहने हुए थे।

—ये सारे शरणार्थी हैं ? साफ कपड़ेवालों में से एक ने वरदीवाले से पूछा।

—जी हाँ। वरदीवाले ने कहा—आप जल्दी सवाल पूछ लीजिए, ट्रेन के चलने का वक्त हो रहा है।

—आप कहाँ जा रहे हैं ? उनमें से एक ने कौवे से पूछा।

—मैं ? मैं शरणार्थी हूँ। रिफ्यूजी। उन्होंने जनाब तोप चला दी थी। उस बच्चे को गोली भी लगी थी···वो जो उधर है···उस औरत की गोद में। उन्होंने तोप चला दी थी। आवाज ऐसी होती है, जैसे चावल की देगची कोई आपके कान में घुसेड़ दे !

बूढ़ा आदमी अब तक उठकर खड़ा हो गया था। बोला—आप लोग अखबार वाले हैं न ? मैंने ही सुनी थी तोप की आवाज।

—हाँ, उसने भी सुनी थी, मैंने भी सुनी थी। कौवे ने कहा।

—आप कहाँ के रहनेवाले हैं ? पत्रकार ने पूछा।

—मैं ? मैं भी वहीं का हूँ न। मैं तोप के बारे में बता रहा था···

—आप मुझसे पूछिए न साहब ! बूढ़े आदमी ने बीच में टोका—अभी तो इसकी मलहम-पट्टी नहीं हुई है। बच्चे की जाँघ में गोली लगी थी। आप खुद देख सकते हैं···

—अरे ! अचानक एक पत्रकार चीखा। उसकी पिंडली में भी उस काले बच्चे ने दाँतों से काट लिया था। पत्रकार बेहद खीज गया। और कोई वक्त होता, तो उसे चाँटा मार देता। प्लेटफार्म पर सहसा काफी शोर होने लगा। कुछ लोग शरणार्थियों पर उनकी सरकार के अत्याचार के विरोध में प्रदर्शन करने आ गये थे। प्रदर्शनकारियों ने बड़े-बड़े झण्डे और पोस्टर उठा रखे थे।

बूढ़ा इस व्यतिक्रम से असन्तुष्ट हो गया। लेकिन उस काले बच्चे में अचानक एक अजीब परिवर्तन हुआ। जानवर की तरह रेंगने की बजाय वह दोनों पैरों पर खड़ा हो गया, फिर जैसे उत्साहित होकर दरवाजे की ओर

लपका। रास्ते से कौवा फुरती के साथ अलग हो गया। पत्रकार हटा नहीं था, लिहाजा उसकी कलाई दोनों पंजों से पकड़कर बच्चा दाँत मारने जा ही रहा था कि वह भी छटककर अलग हो गया। बच्चा डब्बे के दरवाजे तक आ गया। प्रदर्शनकारी शरणार्थियों का उत्साह बढ़ाने के लिए बिल्कुल करीब आ गये थे। इतने छोटे बच्चे को दरवाजे पर देखकर झण्डा हाथ में लिये हुए एक प्रदर्शनकारी ने अन्दर की ओर झुककर बच्चे के गाल पर हाथ फेरा। बच्चे ने फुरती के साथ पलटकर उसकी हथेली पर जोरों के साथ काट लिया। प्रदर्शनकारी तिलमिला गया। उसके हाथ का झण्डा नीचे गिर गया। बच्चे ने झण्डा उठा लिया। झण्डा लेकर वह बेहद खुश हो गया। डब्बे के दरवाजे के करीब वह झण्डा ऊँचा करके दो-तीन बार बन्दर की तरह उछला और पूरे बल से चिल्लाया—नहीं चलेगा···नहीं चलेगा···!

पत्रकारों के लिए यह खास दृश्य था। कौवा और बूढ़ा निराश हो गये। पत्रकारों को अन्तिम बार आकर्षित करने के लिए बूढ़े ने एकाएक युवती की गोद से बच्चे को छीना और पत्रकारों की ओर बढ़ाते हुए बोला —आपको यकीन नहीं आयेगा, जनाब···

लेकिन इसके आगे वह बोल नहीं सका, जैसे उसे किसी ने जमा दिया हो। उसकी आँखें फटती चली गयीं। कुछ देर वह बच्चे को पत्रकारों की ओर बढ़ाये अवाक् खड़ा रहा, फिर उसे सीने से भींचकर रो पड़े। बच्चा मर चुका था।

पत्रकार इसके लिए तैयार नहीं थे। ठीक इसी वक्त ट्रेन की सीटी बजी। वरदीधारी आदमी पत्रकारों को नीचे उतारने लगे। बच्चा उसी तरह नारे लगाये जा रहा था। नीचे जाते हुए पत्रकारों और बूढ़े की ओर कौवे ने बारीकी से देखा और एक पत्रकार से आहिस्ता-से कहा—सुनिए ···कम्बल···आपका क्या खयाल है, कम्बल सभी शरणार्थियों को मिलेंगे न ? मैं भी शरणार्थी हूँ ! कौवे ने उसे आश्वस्त करते हुए कहा।

□

प्रियदर्शी

जानकी, वो क्या है वहाँ ?—दाढ़ीवाले उस भद्र पुरुष ने तीखी लू और गर्द की चादर के उस पार एक काले धब्बे की तरफ इशारा करते हुए पूछा।

वो ? तो कुछ नहीं, एक चील है साहब।

चील ? ओह। अच्छा गिद्ध कैसा होता है ?

गिद्ध ? ओह गिद्ध—जी वो गिद्ध अजीब गन्दा-सा होता है साहब, बैठेगा-सा। बड़ा भी। काफी बड़ा।—जानकी गिद्ध का परिचय देने की कोशिश करने लगा। लेकिन वह सफल नहीं हुआ। साहब असन्तुष्ट हो आया। लेकिन उपाय भी क्या था। उसने कैमरा दुबारा कंधे पर लटका लिया और डायरी में कुछ लिखने लगा।

अब चलें ?—जानकी ने पूछा।

हाँ ! चलो ?—साहब ने चप्पलों को जमीन पर पटखकर अपने सफेद पंजों पर जम गई धूल साफ करने का नाट्य किया। उसके चप्पल भी चन्दन की लकड़ी जैसे थे। लेकिन धूल ने पाँव और चप्पल दोनों को किसी कदर मटमैला बना दिया था।

साहब चल पड़ा। जानकी शुरू से ही उससे प्रभावित हो गया था। जानकी से पहले ही वह ठेला धकेलने लगा। जानकी ने बड़ी फुर्ती से ठेला थामकर साहब को अलग हटाया था।

धूप अब कम हो रही थी और चारों तरफ हवा में एक घुटन जैसे भरने लगी थी। साहब ने अपना गोरा चेहरा ऊपर उठाया और हवा सूँघी। दो